पंचम अध्याय

पृ. 93--134

"मृगमांग" उपन्यास का प्रस्तुति शिल्प

पंचम अध्याय

"भ्रमभंग" उपन्यास का प्रस्तुति शिल्प

१. शिल्प - विधि : स्वरूप

"शिल्प - विधि" अंग्रेजी के "टेकनिक" शब्द का हिन्दी रूपान्तर है | "शिल्प" शब्द का अर्थ है, "कारिगरी" और "विधि" का अभिप्राय है "प्रणाली" | रचना को प्रस्तुत करने की प्रणाली को शिल्पविधि कहते हैं | किसी वस्तु के निर्माण की जो विधियाँ होती हैं, उनके समुच्चय को ही शिल्पविधि के नाम से पुकारा जाता है |[१]

जैनेन्द्र कुमार के मतानुसार, "रचना पध्दति का अपना कोई निश्चित, रूढ या परंपरागत रूप नहीं होता | यह तो एक ऐसी गतिशील प्रक्रिया है, जो युग और समय की माँग तथा लेखकीय रुचि के अनुरूप परिवर्तित होती रहती है | साहित्य की आत्मा भले ही एक और चिरन्तन रहे, उसका रूप समयानुसार बदलता रहता है |"[२]

रचनाकार अपनी अनुभूतियोंको उपयुक्त ढंग से व्यक्त करने के प्रयत्न में शिल्पगत नये-नये प्रयोग करता है | "वास्तव में शिल्पविकास में वह प्रयोग ही अपना योग दे सकता है, जो अन्य अनेक गुणों के साथ ही यथार्थ में अपने युग का प्रतिनिधित्व कर सकने की सामर्थ्य रखता हो|"[3] युग परिवर्तन के साथ-साथ जीवन-मूल्यों में भी बदलाव आया | साथ ही जीवन विधायक धारणाएँ भी बदलीं | कुछ मूलभूत सिध्दांतों में भी परिवर्तन हुआ | इस परिवर्तित जीवन-सत्य की उचित अभिव्यक्ति के लिए आधुनिक उपन्यासकारों को नवीन शिल्प-विधि का आश्रय लेना पडा|

इसतरह उपन्यास की शिल्प-विधि एक प्रकार से लेखकीय संवेदनानुभूति एवं उद्देश्य को विभिन्न उपकरणों के माध्यम से औपन्यासिक रूप प्रदान करने की प्रक्रिया होती है।

२. प्रस्तुति - शिल्प से तात्पर्य

उपन्यास युग तथा समाज के संदर्भ में बदलते मानव-जीवन का व्यापक चित्र प्रस्तुत करता है। विषय चयन में रचनाकार की रुचि का विशेष महत्व होता है। अतः वह मानव-जीवन के उसी अंश को चित्रित करता है, जिससे उसका उद्देश्य - जीवनदर्शन स्पष्ट हो। इस विषय को कलारूप में ढालने की प्रक्रिया शिल्पविधि है। इस प्रक्रिया में विभिन्न उपकरणों का उपयोग किया जाता है। यही औपन्यासिक तत्व हैं।

लेखक का अपना एक उद्देश्य होता है। जो उसके व्यक्तित्व के अनुरूप होता है। उसी के प्रतिपादन के लिए वह उपयुक्त कथावस्तु का चयन करता है। कथावस्तु में कुछ घटनाओं का निर्माण किया जाता है। इसमें मानव चरित्रों का योग होता है। चरित्रचित्रण एवं कथानक को सजीवता एवं स्वाभाविकता लाने के लिए कथोपकथन की योजना की जाती है।

घटनाओं एवं पात्रों को यथार्थ, सजीव, विश्वसनीय एवं प्रभावोत्पादक बनाने के लिए देश - काल - वातावरण का चित्रण होता है। कथ्य विषय की सफल अभिव्यक्ति के लिए लेखक एक विशेष ढंग को अपनाता है। उसे शैली कहते हैं। इन सभी तत्वों को साकार करने के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व भाषा है। "वास्तव में पात्रों, परिस्थितियों एवं वातावरण की विश्वसनीयता एवं यथार्थता तभी प्रतिष्ठित की जा सकती है जब इन सब के अनुकूल भाषा का प्रयोग किया गया हो।"[४]

इसप्रकार उपन्यास की शिल्प-विधि के विभिन्न तत्त्व हैं। [१] उद्देश्य, [२] कथावस्तु, [३] चरित्रचित्रण, [४] कथोपकथन, [५] देश-काल-वातावरण, [६] भाषा और शैली। इनमें से अंतिम दो तत्त्व [भाषा और शैली] "प्रस्तुति - शिल्प" कहलाते हैं।

आज के उपन्यासकार का मुख्य लक्ष्य कथ्य का "संप्रेषण" हो गया है। कथ्य के आयामों को सघनता प्रदान करने के लिए वह आवश्यकतानुसार शिल्प-रूप का निर्माण करता है। इस संदर्भ में उसे न तो परम्परागत और न ही आरोपित शिल्प - रूप स्वीकार्य है। देवेश ठाकुर का "भ्रमभंग" उपन्यास इसका प्रमाण है।

"भ्रमभंग" में देवेशजीने शिल्पगत प्रयोगधर्मिता प्रस्तुत की है। प्रयोगधर्मिता केवल प्रयोग और नाविन्य के लिए न होकर अपने निश्चित मंतव्य को आकर्षक एवं कलात्मक ढंग से संप्रेषित करने में सफल हुयी है। सामान्य रूप से किसी भी रचनाकार के शिल्पगत अध्ययन के अंतर्गत उसकी संवेदना के धरातल, उसके कथ्य संप्रेषण, उसकी प्रतिबध्दता के आयाम तथा जीवनदृष्टि के निरूपण के साथ साथ इन सबकी अभिव्यक्ति में उसे सफलता मिली है या नहीं। उसकी भाषा उसकी अनुभूति को प्रमाणिक रूप से प्रस्तुत करने तथा अर्थवत्ता प्रदान करने में सक्षम हो सकी है या नहीं। किन्तु देवेश ठाकुर के "भ्रमभंग" के उपन्यास में प्रस्तुत शिल्पगत अध्ययन के अंतर्गत मैंने केवल प्रस्तुति-शिल्प पर ही विस्तार से विचार किया है।

वस्तुतः देवेशजी प्रगतिशील कथाकार होने के नाते उनके पास एक निश्चित, प्रगतिकामी कथ्य है। जिसे उन्होंने बार बार अनेक प्रकार से अपनी रचनाओंमें चित्रित किया है। लेकिन उनकी मान्यता है कि, योग्य कथ्य की प्रस्तुति के लिए योग्य भाषा-शैली का प्रयोग भी महत्वपूर्ण योग होता है।

आज का पाठक योग्य कथा के साथ साथ लेखक से योग्य सार्थक और आकर्षक प्रस्तुति की अपेक्षा रखता है। "भ्रमभंग" उपन्यास के कथ्य को लेकर बहुत कुछ लिखा जा चुका है लेकिन उसकी प्रस्तुति-शिल्प पर अभीतक गम्भीरता से विचार नहीं किया गया। इसलिए शिल्पकौशल का विस्तृत और गम्भीर अध्ययन आवश्यक है।

३. भाषा

आधुनिक उपन्यासों में वस्तुविधान साधन रहा है। साध्य है - "अनुभाव का सम्प्रेषण"। जिस उपन्यास की भाषा कथ्य को प्रभावशाली ढंग से सम्प्रेषित कर सकती है वही उपन्यास सार्थक होता है। जीवन संदर्भों के अनुसार भाषा भी यथार्थ होनी चाहिए। डॉ. सुरेश सिन्हा कहते हैं कि, "विकलांग भाषा किसी उपन्यास के कथ्य को न तो समर्थ बना सकती है, न किसी से संवेदनशीलता की प्रतीति ही दिला सकती है। वह मानवीय संदर्भों को कोई सार्थक संज्ञा भी नहीं दिला पाती। अपनी सूक्ष्मता, पैनेपन एवं काव्यात्मक व्यंजनाओं से ही उपन्यासों की भाषा आज अर्थवान् हो सकती है।"[५]

भाषा के अंतर्गत निम्नलिखित रूपोंका अध्ययन आवश्यक है।

४. शब्द-प्रयोग के विभिन्न रूप

सतीश पाण्डेय कहते हैं कि, "शब्दों के विविध स्वरूपों का विधान भाषा में सौन्दर्य लाने के लिए विविध उपकरणों का उपयोग, मुहावरों और कहावतों की समन्विति, वाक्यों की कलात्मक योजना तथा भाषा की युगानुरूप अभिव्यक्ति आदि के कारण देवेश ठाकुर के उपन्यासों की भाषा सहजता और सौन्दर्य की प्रभोज्ज्वलता अनायास ही परिलक्षित होती हैं।"[६]

उपन्यासकार देवेश ठाकुर की भाषा पात्रानुकूल, सूक्ष्म, सांकेतिक एवं पैनेपन से युक्त है। "भ्रमभंग" उपन्यास में खडीबोली के साथ ही देशी-विदेशी स्त्रोतों से विविध प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है।

क] तत्सम शब्द :-

देवेशजीने स्वाभाविकता के साथ पात्रानुकूल तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है, जिसमें भावों की पूर्ण अभिव्यक्ति और बोधगम्यता मिलती है। "भ्रमभंग" में प्रयुक्त कुछ तत्सम शब्द यहाँ प्रस्तुत हैं।

"रक्तिम, क्षितिज, अनवरत, मातृ वत, अवसन्न, निर्मम, पाषाणी।"[७] निश्चित रूप से ये शब्द हिन्दी में पूर्णत: घुलमिल गये हैं। इनके प्रयोग से भाषा में सहज प्रवाह दिखाई देता है।

ख] तद्भव शब्द :-

तद्भव शब्दों का प्रचुर मात्रा में "भ्रमभंग" में प्रयोग होने के कारण उपन्यास की भाषा जनजीवन की भाषा बन गई है। कुछ शब्द ग्रामीण क्षेत्र में बोले जाते हैं। जैसे, "घुगुर-फुगुर"।[८]

तद्भव शब्द : "फुनगी, मनुहार, खटोला, बैंजनी, चिरौरी, गाछ, ललाई, चिहुक, गोडती, बिछावन।"[९]

ग्रामीण क्रियाओं का प्रयोग : "दावत जीमना, हुस्ता सकते हो, कलपो मत, बिसूरना, बोल-बतिया लो, सुझाईन दिया, सुहरा रही है।"[१०]

"भ्रमभंग" का चन्दन जब नजीबाबाद पहुँचता है तो शफीक की भाषा स्थानीयता की रंगत लिए हुए दिखाई देती है। "दीवानजी होत।"[११]

ग] विकृत शब्द :-

स्थानीय परिवेश एवं परिस्थिति विशेष का प्रभाव उत्पन्न करने के लिए विकृत शब्दों का प्रयोग "भ्रमभंग" में है। जैसे, "सियाही, हरेक।"[१२]

घ) <u>बम्बइया हिन्दी के शब्द</u> :-

देवेशजी के "भ्रमभंग" उपन्यास की केन्द्रभूमि बम्बई रही है, जहाँ सामान्य लोगों के बोलचाल की हिन्दी, शुध्द खडीबोली हिन्दी से सर्वथा अलग है। बम्बई हिन्दी के स्वरूप पर अलग अलग भारतीय भाषाओं का प्रभाव स्पष्ट है। बोलनेवाले पात्र की मातृभाषा के प्रभाव से शुध्द हिन्दी का रूप विकृत हो उठता है लेकिन देवेश ठाकुरजीने विशेष परिस्थितियों में बम्बईवासी पात्रों का आभास दिलाने के लिए टूटे फूटे एवं विकृत शब्दों का उपयोग करके सहज स्वाभाविक चित्र खींचे हैं। जैसे, "मोरी, सींगदाणा।"[१३]

ङ.) <u>मराठी के शब्द</u> :-

"भ्रमभंग" उपन्यास की धुरी बम्बई होने के कारण मराठी के कुछ शब्दों का प्रयोग भी मिलता है। जैसे, "काका, मोरी, सींगदाना"।[१४]

च) <u>विदेशी शब्द</u> :-

हिन्दी में उर्दू शब्दों का सहज स्वाभाविक प्रयोग होता रहा है। उर्दू शब्दों का मूल स्त्रोत अरबी, फारसी है। उर्दू के कुछ शब्द ऐसे हैं जो हिन्दी में पूर्णतः स्वीकृत हो चुके हैं। देवेशजीने "भ्रमभंग" उपन्यास में ऐसे शब्दों को प्रयुक्त किया है। भाषा में सहज प्रवाह लाने में इनकी सहायता रही है।

छ) <u>अरबी शब्द</u> :-

"फीस, फजल, लायक, इतमीनान।"[१५]

ज) <u>फारसी शब्द</u> :-

"तनख्वाह, दाखिला, रिसाला, खुशनसीबी, खामोश, तीमारदार।"[१६]

ञ] अंग्रेजी शब्द :-

"भ्रमभंग" उपन्यास में देवेशजीने अंग्रेजी के शब्दों का खुलकर प्रयोग किया है। प्रस्तुत उपन्यास का केन्द्र बम्बई होने के कारण और भारतीय जनजीवन में अंग्रेजी शब्दों का प्रचलन अधिक मात्रा में होने के कारण पात्रों के यथार्थजीवन को प्रकट करने के लिए अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग उचित ही है। उपन्यास के हर पृष्ठ पर अंग्रेजी के शब्दों और वाक्यों को देखा जा सकता है। कहीं कहीं तो आधा वाक्य अंग्रेजी का अ और आधा हिन्दी का प्रयुक्त हुआ है। अंग्रेजी के कुछ शब्दों को हिन्दी व्याकरण के नियमानुसार परिवर्तित किया है।

अंग्रेजी शब्द : "इन्टरव्हयू, टयूशन, कोचिंग क्लास, ग्राऊण्ड, मनिऑर्डर, काऊण्टर, विण्डो, अटैची, मिलिट्री, सैल्यूट, फूटपाथ, लोकल ट्रेन, हॉस्पिटल, युनिवर्सिटी, अफेअर, प्लैटफॉर्म, एफोर्ड, लैट्रीन, क्रीम, पाउडर, ब्रश, बाथरूम, पोएट्री, मडगार्ड, अपॉइण्टेड, पॉकेट, बल्ब, इन्स्टॉलमेंट, बैडरूम, फ्रेण्ड, सॉरी, सर्विस, पॉप्युलर, एरेंजमेण्ट, कम्पलेशन, थीसिस, कॉन्सेण्ट्रेशन, पीरियड, आयडेंटिटी।"[१७] "एक सिलेक्टेड क्लास हिपोक्रैट्स की।"[१८]

इसप्रकार देवेशजी ने अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग भाषा में सहजता और स्वाभाविकता के लिए किया है। किसी हीन ग्रंथि के कारण अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग नहीं हुआ है।

त्र] अंग्रेजी के विकृत शब्द :-

कहीं कहीं पात्रों की योग्यता और परिस्थिति के अनुकूल अंग्रेजी शब्दों के विकृत रूप भी प्रयुक्त किये हैं। इसके माध्यम से लेखक ने पात्रों तथा परिस्थितियों का सहज चित्र प्रस्तुत किया है। जैसे "रिटाइर"।[१९]

प्रो. त्रिवेदी के व्यक्तित्व को उजागर करने के लिए देवेशजी ने अंग्रेजी के अशुध्द वाक्य का भी प्रयोग किया है। जैसे, " .... व्हेन एवर आई गोज टू द क्लास देयर इज पिन्स ड्राप्स साइलेंस।"[२०]

ट] द्विरुक्त शब्द :-

भाषागत सौन्दर्य की अभिवृध्दि के लिए प्राय: द्विरुक्त शब्दों का प्रयोग किया जाता है। देवेशजी के "भ्रमभंग" उपन्यास में प्रयुक्त द्विरुक्त शब्द भाषा को सौंदर्यपूर्ण एवं सहज प्रवाहशाली बनाने में सहायक हुये हैं। जैसे, "बूँद - बूँद, अच्छी-अच्छी, बडी-बडी, अपने-अपने।"[२१]

ठ] ध्वन्यार्थक शब्द :-

"भ्रमभंग" में देवेशजीने कुछ ध्वनिमूलक शब्दों का सुन्दर प्रयोग करके वातावरण की यथार्थ स्थिति को चित्रित किया है। जैसे, सुइयों की "टिक-टिक", पंखो की "घर्र-घर्र", चप्पलों के रगडने की "खस्सड-खस्सड"।"[२२]

ड] निरर्थक शब्द :-

"लेकिन-वेकिन"[२३] जैसे शब्द निरर्थक हैं। किन्तु भाषा में स्वाभाविक प्रवाह लाने की कोशिश में प्रस्तुत उपन्यास में प्रयुक्त हुए हैं।

ढ] अपशब्द :-

साहित्य में अपशब्दों का प्रयोग अवांछित होता है, किन्तु कभी कभी पात्रानुकूल भाषा का निर्माण करने के लिए ये आवश्यक होते हैं। देवेशजी ने "भ्रमभंग" के कथातत्व में यथार्थता का आभास दिलाने तथा विशिष्ट परिस्थितियों में सामाजिक - राजनीतिक विषमताओं से युक्त वातावरण पर आक्रोश प्रकट करनेवाले पात्रों के संवादों में अपशब्दों का प्रयोग किया है। जिससे पात्र का व्यक्तित्व अधिक उजागर होता है।

भारत लॉज के कमरा नं. ११ में रहनेवाले वरगिस के व्यक्तित्व को चित्रित करते हुए लेखक लिखता है, "मैथ्यू, ओ हरामी के पिल्ले अभी तक चाय नहीं लाया। रास्कल। तुम साला झाडूवाली से इश्क फरमाता होगा। हम साले का ऑफिस टाइम हो गया है। ओ

मोहिन्दर के बच्चे। साले। नहाने के पानी का क्या हुआ? तुम्हारा नल पानी देता है कि मूतता है। मैनेजर कहाँ है मादर...। क्या कहा? अभी आया ही नहीं। बहन... पडा होगा साला नाली में। तुम साला भारत लॉज को बेच क्यों नहीं देता। स्साला लोग। हरामी के पिल्ले। अपनी माँ के....।"[२४]

ग] <u>नये रचित शब्द</u> :-

हिन्दी उपन्यासकारों में शब्दों को नये अर्थ प्रदान करने तथा नये शब्दों का निर्माण करने की प्रवृत्ति स्वातंत्र्योत्तर काल से विशेष रूप से प्रचलित है। देवेशजी भी शब्दों को नये अर्थ देने के क्षेत्र में पीछे नहीं हैं। "भ्रमभंग" में कुछ शब्द सर्वथा अर्थो में प्रयुक्त हुए है। जैसे, "अबूझ, अनबीता, अनदिख, अधरोती।"[२५]

कुछ बहुवचनीय शब्दरूप सर्वथा नवीन लगते हैं। जैसे, "बात-चीतों, दोपहरियें, सुखा-दुखों, भागा-दौडी, दौडा-धूपी।"[२६]

५. <u>भाषा - सौन्दर्य के साधन</u>

स्वातंत्र्योत्तर काल के उपन्यासकार अपनी अभिव्यक्ति को सुदर और आकर्षक बनाने के लिए भाषा के विभिन्न उपकरणों का प्रयोग करते आये हैं। कुछ प्रमुख उपकरणों को "भ्रमभंग" उपन्यास में प्रयुक्त किये हैं।

क] <u>विशेषण</u> :-

नये नये विशेषणों का आविष्कार करके उनके प्रयोग से शब्दों को नयी अर्थवत्ता प्राप्त हुयी है। इन विशेषणों का सार्थक प्रयोग भाषा-सौन्दर्य की अभिवृध्दि में सहायक बन पडा है। जैसे, "सपनीले - चुम्बन, उदास - आँसू, व्यावसायिक भावुकता, कोमल जिम्मेदारी, सहज - तरल मौन, पराजित, परवशता, पथरायी हुई चिन्ता।"[२७]

ख] रूपक :-

भावों के सफल सम्प्रेषण के हेतु नये रूपकों का निर्माण एवं प्रयोग भ्रमभंग उपन्यास में है । जैसे, "साँसों का अमृत, नेहा की उंगलियाँ, विवशता की करुणा, आँखों में भरी हुई अनिश्चय की रेत और मन-मानस में संकल्पों-विकल्पों की धूल ।"[२८]

ग] उपमान :-

नये उपमान भाषा को आकर्षक तथा अभिव्यक्ति को सशक्त बनाने में सहायक हुये हैं । जैसे,

".... खोली के सामने रखो पत्थर-सी अपनी औकात ।"[२९]

".... रूई के गोले सा नरम, फेन - सा कोमल बच्चा ।"[३०]

".... छोटे - छोटे बच्चे गुलगुले - से ।"[३१]

".... गले के हार सी ऊँची झुकती हुई इमारतें ।"[३२]

६] शब्दशक्तियाँ

अभिव्यक्ति को अधिक सारगर्भित बनाने के लिए अभिधा के साथसाथ लक्षणा और व्यंजना का प्रयोग "भ्रमभंग" में है । इनके माध्यम से भाषा अभिव्यक्ति में और भी समर्थ हो सकी है । जैसे, ".... चन्दन, तुम आज गुलाबों के बीच में हो । गुलाबों को देखते रहो । गुलाबों की हर टहनी पर लिखा है : डोंट टच मी । लेकिन इनको देखते रहो ।"[३३]

७] प्रतीक

स्थान-स्थान पर मनोवैज्ञानिकता के विकास के साथ प्रतीकात्मक भाषा का प्रयोग करके गूढ एवं रहस्यमय विषयों को सहज स्वाभाविक ढंग से अभिव्यक्त किया है । "भ्रमभंग" के चन्दन की समस्याएँ "छत में लगे जाले के प्रतीक से चित्रित हैं ।" यहाँ "जाले और पेंटिंग्स" चन्दन और सुमन के प्रतीक बन जाते हैं । तो "चाकस्टिक और ब्लैकबोर्ड" चम्पा और रग्घूमल के ।"

८. बिम्ब

भाषा के सौन्दर्य को आकर्षक बनाने के लिए "भ्रमभंग" में स्थान स्थान पर बिम्बयोजना दृष्टिगत होती है। जैसे, ".... सुमन झुकी हुई डाली पर एक पूरा खिला हुआ फूल है : सुन्दर भी और आकर्षक भी।"[३४] ".... वह जैसे हरदम ही व्यस्त पीडा की मूक सूरत बनकर रह गयी है। .... आँसू, और आँसू -- जो निकलें और पथराकर लटके रह जायें।"[३५]

९. मुहावरे और कहावतें

भाषा को सजीव और प्रभावशाली बनाने के लिए मुहावरे, कहावतों का प्रयोग किया जाता है। मुहावरे और कहावतों का प्रयोग नये अर्थबोध के साथ किया है। जैसे, "दाँत निपोरना, होम होना, फाँके करना, काठ मरना, बुत बनना, मक्खी निगलना।"[३६]
कहावते - "बूँद - बूँद सों घाट भरै।"[३७]

१०. सूक्तियाँ

रचनाकार अपने जीवन के अनुभावगत सत्य को सूक्तियों का रु प देता है। देवेशजी के संघर्षमय जीवन के खट्टे-मीठे अनुभाव "भ्रमभंग" उपन्यास में सुक्तियों में उभरे हैं। सुक्तियों के उपयोग से भाषा में सौन्दर्य और अर्थ गांभीर्य की अभिवृध्दि हुई है। जैसे,
".... प्यार एक कडी है, जो मनों को जोडती है। बाँधती भी है।"[३८]
".... सुख मन का होता है, जो जहाँ मान ले, जो जहाँ पा ले।"[३९]
".... कीचड में कमल खिल जाने से कीचड तो सुगंध नहीं देने लगता।"[४०]

११. वाक्य - विश्लेषण

कथ्य की नवीनता का सार्थक संप्रेषण करने के लिए रचनाकारों ने नयी वाक्य परम्परा का आरम्भ किया। नये नये वाक्य-प्रयोग होने

लगे। प्राचीन वाक्य-विन्यास नये भावबोध के अनुरूप अर्थवहन करने में असमर्थ हो गये। वाक्य-विन्यास में नवीनता लाने के लिए पात्रों की मन:स्थितियों के अनुकूल अधूरे और अपूर्ण वाक्यों का सहारा लिया गया। "सतीश पाण्डेय" का कहना है कि, "जीवन के विविध पहलुओं को प्राचीन परम्परागत वाक्य-विन्यास के माध्यम से अभिव्यक्त करना दुष्कर था। इसीलिए इन्होंने [देवेशजीने] परम्परागत व्याकरण सम्मत वाक्य-विन्यास में परिवर्तन करके उन्हें नये अर्थबोध से युक्त किया।"[४१]

-- देवेशजी ने "भ्रमभंग" में कहीं पर कर्ता-विहीन वाक्य प्रयुक्त किये हैं, तो कहीं कर्ता का प्रयोग वाक्य के अन्त में किया गया है। उदाहरणार्थ -

" .... इन इन बरसों में बडी ममता दी है तुमने।"[४२]

" .... कुछ एण्टरटेन हो जाता है मन।"[४३]

-- कहीं पर वाक्यों में कर्ता, क्रिया आदि का कोई निश्चित क्रम नहीं रह गया है। जैसे -

" .... कॉलेज हॉस्टल का कमरा मिल गया है रहने को।"[४४]

" .... छुट्टियाँ हैं और शामें हैं, और हम दोनों के बीच घुलता हुआ अकेलापन है।"[४५]

-- "भ्रमभंग" में पात्रों के मानसिक उद्वेलनों एवं अन्तर्द्वन्द्वों की सफल अभिव्यक्ति के लिए अधूरे वाक्यों का प्रयोग हुआ है। जैसे -

" .... बातें करने में तब भी तुम कितनी प्रौढ थी। अब तो ...।"[४६]

" .... सुन्दरता की माप नहीं होती। सुन्दरता मन की ....।"[४७]

" .... कभी कोई तकलीफ हो तो ....।"[४८]

-- टूटे बिखरे तथा छोटे छोटे वाक्य

" .... कहाँ चिपक गयी थी?

.... एक फ्रेंड मिल गयी थी। छोडती ही नहीं थी।

.... अच्छा छोडो। बोलो क्या पियोगी? "[४९]

-- क्रिया विहीन वाक्य

" .... नजीबाबाद। एक छोटा-सा घर। छोटी छोटी बातें। छोटी-छोटी बातों का अपनापन। दिल्ली का स्टेशन। कितना

बडा है।"[५०]

-- "अन्तराल चिन्ह" वाले वाक्य

" .... खामोशी .... समूचे लान पर .... सामने की फूलों से लदी झाडी पर .... पास के गुलमोहर पर।"[५१]

" .... चन्दन तुम बुरे कहाँ हो .... बुरी तो मैं हूँ .... बहुत .... बहुत बुरी।"[५२]

-- बिना अंग्रेजी शब्दों वाले वाक्यों में अंग्रेजी वाक्यों का प्रभाव

" .... उसे टैक्स मत करो।"[५३]

" .... स्टोव पम्प हो रहा है।"[५४]

" .... वह सपने नहीं लेता।"[५५]

-- बम्बई के अहिन्दी भाषी पात्रों के वाक्य

" .... अरे चन्दू भाय तू फिर आया।"[५६]

१२. युगीन विचारधाराओं के अनुकूल भाषा

देवेशजी के उपन्यासो में विविध विचारधाराओं के संबंध में विचार व्यक्त करते समय तदनुरूप भाषा का प्रयोग मिलता है। देवेशजी का मूल स्वर समाज परख रहा है। जो कि साम्यवादी विचारधारा के अधिक निकट है। जैसे,

" यहाँ युनिफॉर्म के भीतर भी भरा पेट और भूखा पेट झाँकता है। ये भरे हुए बदन। हँसमुख चेहरे। ये सुखी ठठरियाँ। ये उदास चेहरे।"[५७]

१३. मनोवैज्ञानिक शब्दावली

देवेशजी का "भ्रमभंग" उपन्यास मनोवैज्ञानिक उपन्यास की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। फिर भी इसकी भाषा में मनोवैज्ञानिक शब्दावली का प्रचुर मात्रा में प्रयोग है। "भ्रमभंग" के "चन्दन" को मनश्चेतना में उठनेवाले विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए इसका प्रभाव देखा जा सकता है। चन्दन द्वारा महत्वहीन जिन्दगी का आत्म-विश्लेषण इस संदर्भ में उल्लेखनीय है। जैसे,

"खोली के सामने रखो पत्थर-सी अपनी औकात -, जिस पर कोई बरतन माँज जाता है | कोई कपडे धो जाता है और कभी-कभी कोई शरारती बालक आकर पेशाब भी कर जाता है |"[५८] इस उध्दरण में हीन भावना का शिकार चन्दन जो उपन्यास के अंत में इससे मुक्त हो जाता है, उसके मनोभावों का सफल मनोवैज्ञानिक चित्राण मिलता है |

१४. व्यंग्यात्मक शब्दावली

सामाजिक चेतना का प्रतिबध्द रचनाकार प्रचलित समाजव्यवस्था कभी पसंद नहीं करता | वह व्यवस्था के विरोध में आक्रोश करता है | तब उसकी भाषा का रूप व्यंग्यात्मक एवं पैना हो जाता है | शोषण, सामाजिक विकृतियाँ, परम्परागत मान्यताएँ एवं राजनितिक छलकपट पर व्यंग्यात्मक प्रहार किए हैं | कुछ उदाहरण —

" .... सच, वह आदमी कम है, रेमंड का सूट ज्यादा है | उसके बदन से सूट उतार दो वह आदमी ही नहीं रहेगा |"[५९]

" सैल्समैन आदमी कहाँ होता है | कडक इस्तिरीवाला कपडा होता है|"[६०]

१५. छायावादी शब्दावली

"भ्रमभंग" उपन्यास में कहीं-कहीं पर छायावादी भाषा का रूप दृष्टिगत होता है | जैसे -

" .... न मैंने मानसरोवर देखा है, न उसमें उगते नीलकमल और न उसके बीच किल्लोल करती हंसिनियाँ | मैंने तो तुम्हारे मुख की दीप्ति देखी है | तुम्हारे स्वर की सुगंध ....| तुम्हारा स्वाप्नल स्पर्श ...|"[६१]

१६. सीमाएँ

"भ्रमभंग" उपन्यास में कुछ भाषासम्बन्धी विसंगतियाँ भी उपलब्ध होती हैं | देवेशजी ने इन्हें जिन रूपों में प्रयुक्त किया है वे प्रयोग सामान्यत: उपलब्ध नहीं होते | ये प्रयोग मुख्यत: क्रियाओं के संदर्भ में, जैसे -

" मैं अभी अभी रोकर चुका हूँ |"[६२]

कहीं कहीं पर वाक्यों के रचाव और शब्दप्रयोग सम्बन्धी त्रुटि लगती है। जैसे,

" .... उसे वह भी बहुत स्वाद लगेगी।"[63]

"अकसर" और "इनसान" जैसे शब्दों का प्रयोग भी किया गया है जो बहुदा "अक्सर" या "इन्सान" के रूप में प्रयोग में लाये जाते हैं।"[64]

१७. निष्कर्ष

प्रयोगधर्मी देवेशजी की भाषा कथ्य के अनुरूप है। पात्र और परिवेश के अनुकूल शब्दों का प्रयोग है। देवेशजी के द्वारा निर्मित नये विशेषणों, उपमानों, रूपकों, प्रतीकों, बिम्बो के शब्दों में जीवन की विसंगतियों को प्रभावोत्पादक ढंग से व्यक्त करने की क्षमता है। सहायक क्रियाओं से रहित छोटे छोटे सरल वाक्यों का कुशलतापूर्वक प्रयोग है।

देवेशजी की भाषा में लयात्मकता, नाटकीयता, बिम्बात्मकता, चुटीलापन एवं संवेदनशीलता प्रचुर मात्रा में है। अनुभाव के मोती सूक्तियों के रूप में प्रयुक्त होकर भाषा को आकर्षक और प्रभावी बना दिया है। उत्कट अनुभूति की सफल अभिव्यक्ति है। बम्बई में प्रचलित हिन्दी अंग्रेजी के शब्दों के विकृत रूपों का प्रयोग देवेशजी बेझिझक करते हैं।

विविधताओं से युक्त जीवन के विविध आयामों को यथार्थ के धरातल पर सफल अभिव्यक्ति दी है। लेखक की भाषा में सहज प्रवाह है। बिखरे टूटे वाक्य जिन्दगी के बिखराव और टूटन को अभिव्यक्त करने में विशेष प्रभावशाली बन पडे हैं।

समग्रत: देवेशजी की भाषा में अपने कथ्य को सार्थक एवं प्रभावी रूप में संप्रेषित करने का सामर्थ्य है।

१८. शैली : स्वरूपनिरूपण

"रचनाकार अपने आशय को विशेष पध्दति से व्यक्त करने का प्रयास करता है। उसे शैली कहा जाता है।"[६५] डॉ. श्यामसुन्दरदास शैली के बारे में कहते हैं, "किसी कवि या लेखक की शब्दयोजना, वाक्यांशो का प्रयोग, वाक्यों की बनावट और उनकी ध्वनि आदि का नाम ही शैली है।"[६६] "गुलाबरायजी" के मतानुसार, "शैली अभिव्यक्ति उन गुणों को कहते हैं, जिनमें लेखक या कवि अपने मनके प्रभाव को समान रूप से दूसरों तक पहुँचाने के लिए अपनाता है।"[६७] "इसप्रकार शैली रचना के बहिरंग तथा अंतरंग दोनों सौन्दर्य पक्षों को उद्घाटित करने का प्रबल साधन है।"[६८]

"शैली-शिल्प उपन्यास के कथानक, चरित्रचित्रण एवं भाषा आदि को एक ऐसे ढंग से प्रस्तुत करने का कार्य करता है, जिससे उपन्यासों में नवीनता एवं अभिनव प्रयोग उपस्थित हो सके। उपन्यासकार की अभिव्यक्ति को शैली-शिल्प नया रूप प्रदान करता है।"[६९]

शैली का संबंध रचना के साथ-साथ रचनाकार से भी होता है। इसलिए रचनाकार का परिवेश, अनुभव, शिक्षा, संस्कार, रुचि आदि का भी उसके निर्माण में विशेष महत्व होता है। शैली में लेखक का व्यक्तित्व ही अंतर्निहित रहता है। अत: शैली एक कलात्मक उपलब्धि है, उसे अर्जित करना पडता है।

डॉ. दुर्गाशंकर मिश्रजी के मतानुसार, वास्तव में भावाभि-व्यक्ति की माध्यम भाषा है। और उस माध्यम के प्रयोग की रीति शैली है। हिन्दी साहित्य के प्रारंभिक उपन्यासों में वर्णनात्मक शैली प्रचलित रही। आज उपन्यास के क्षेत्र में अनेक शैलियाँ प्रचलित रही हैं।

१९. विविध शैलियाँ

वस्तुत: किसी भी औपन्यासिक रचना में किसी एक ही

शैली का प्रयोग नहीं होता। कथ्य की माँग के अनुसार उपन्यासकार विविध शैलियों का प्रयोग करता है। रचनाधर्मी उपन्यासकार डॉ. देवेशजी का "भ्रमभंग" उपन्यास समन्वित शैली का अनुपम संगम है। प्रो. सतीश पाण्डेयजी ने अपने ग्रन्थ "कथाशिल्पी : देवेश ठाकुर" में देवेशजी के उपन्यासों में प्रयुक्त २३ शैलियों का विवेचन किया है। इनमें से कुछ शैलियों का प्रयोग प्रधान रूप में तथा कुछ शैलियों का प्रयोग गौण रूप में हुआ है। "भ्रमभंग" में प्रयुक्त प्रमुख शैलियों का विवेचन इसप्रकार है।

क] <u>आत्मकथात्मक शैली</u>

"उत्तम-पुरुष [मैं] की ओर से प्रस्तुत की जानेवाली सभी प्रकार की रचनाओं को आत्मकथनात्मक शैली के अंतर्गत माना जाता है। .... लेखक किसी न किसी रूप में अपने संबंध में कुछ न कुछ कहता है, परंतु कभी कभी वह यह कार्य सीधे वर्णन द्वारा या किसी पात्रद्वारा भी कहता है।"[७०]

आत्मकथनात्मक शैली में लिखे गये उपन्यास उत्तम पुरुष "मैं" के माध्यम से विकसित होते हैं। घटनाओं की अपेक्षा व्यक्ति को अधिक महत्व दिया जाता है। और व्यक्तिचरित्र भी दृश्यों के माध्यमसे प्रस्तुत होता है। यह शैली आत्मविश्लेषण एवं आत्मपरीक्षण की दृष्टि से अत्यंत अनुकूल होती है। "इस शैली में बात इस ढंग से की जाती है कि, जैसे कोई अपना परिचय स्वयं दे रहा हो अथवा अपने जीवन से सम्बध्द घटनायें और स्मृतियाँ स्वयं किसीसे कह रहा हो।"[७१]

उपन्यास का केन्द्रबिन्दु "मैं" होता है। अत: विषय-विस्तार की अपनी सीमा होती है। "भ्रमभंग" में "जीवनी - परकता" "आत्मकथात्मक" प्रतीत होती है।"[७२]

"भ्रमभंग" आत्मकथात्मक शैली का उत्कृष्ट उदाहरण है। "भ्रमभंग" की सम्पूर्ण कथा नायक चंदन द्वारा आत्मकथात्मक शैली में

व्यक्त हुई है। इनमें विविध दृश्यों के माध्यम से चन्दन के चरित्र को विकसित किया है। इस शैली में पात्र के विचार, भाव तथा अनुभाव उपलब्ध होते हैं। "जहाँतक "मैं" के चिन्तन - मनन, कार्यप्रणाली, आत्मपरिक्षण या आत्मविश्लेषण का प्रश्न है, इसकी समकक्षता अन्य प्रकार के उपन्यास नहीं कर सकते।"७३

"भ्रमभंग" का उद्देश्य भी एक मध्यवर्ग युवक के अन्तर्मन में प्रविष्ट होकर उसे पूर्ण रूप से चित्रित करना ही रहा है। चन्दन के अन्तर्मन के संघर्ष के माध्यम से देवेशजी ने मध्यवर्ग की व्यक्ति के मन की उलझनों, विवशताओं तथा कमजोरियों को चित्रित किया है। आत्मकथात्मक शैली का एक दोष भी है कि, कभी कभी मैं के अतिरिक्त अन्य पात्रों के मनोभाव उपेक्षित रह जाने की सम्भावना होती है। जैसे, "भ्रमभंग" में मेघा की विवशता, माँ का चम्पा के साथ रहने के लिए बाध्य होने में उसकी मूक ममता की विवशता आदि का चित्रण नहीं हो पाया है। यह अलग बात है कि देवेशजी को चन्दन के ही अन्तर्मन का चित्रण करना अभिप्रेत रहा है। और इसमें वह सफल रहा है। वास्तव में इस शैली का "मैं" अन्य पात्रों को उनकी परिस्थितियों के रूप में रखकर उनका विश्लेषण नहीं कर पाता। इसके अतिरिक्त "मैं" के प्रति अन्य पात्रों के क्या विचार है यह बात भी स्पष्ट नहीं होती।

उपर्युक्त दोषों का निवारण उन आत्मकथात्मक उपन्यासों में हो जाता है जो विभिन्न पात्रों के दृष्टिकोणों से लिखे गये होते हैं। आजकल आत्मकथात्मक उपन्यास तीन प्रकार के लिखे जाते है।

१] सम्पूर्ण कथा कथानायक के माध्यम से व्यक्त होती है। "भ्रमभंग" इस प्रकार की रचना है।

२] दो-चार पात्रों का सृजन करके उपन्यास की कथा का सारा सूत्र उन्हीं के हाथ में उपन्यासकार सौंप देता है। ये पात्र क्रमशः अपनी अपनी कथा कहते जाते है। अज्ञेय का "नदी के द्वीप" ऐसी ही रचना है। देवेशजी का "कौंचघर" इसका प्रमाण है।

३] अधिकांश कथा तो प्रधान पात्रद्वारा कही जाती है, किन्तु अन्य पात्रों के जीवन, तथ्य और घटनाएँ अन्य पात्रों द्वारा वर्णित होती है। देवेशजी का "इसीलिए" उपन्यास इसप्रकार का है।

इसप्रकार देवेशजी के उपन्यासों में आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग अनेक रूपों में सुन्दर ढंग से और सफलता के साथ हुआ है।

ख] पत्रात्मक शैली

पत्रात्मक शैली में लिखे गए उपन्यासों में कथावस्तु का विकास अपने आत्मीय जनों को लिखे गए पत्रों के माध्यम से होता है। "पत्रों के माध्यम से औपन्यासिक पात्रों को भावाभिव्यक्ति में यह सुविधा रहती है कि वे उन बातों को भी सहज रूप से प्रकट कर देते हैं, जिन्हें प्रत्यक्ष रूप में कहने में संकोच होता।"७४

इसप्रकार पात्र के हृदय में होनेवाली हलचल तथा पात्रों के मन की गूढतम बातों को सुगमता से व्यक्त करने में यह शैली विशेष रूप में उपयोगी होती है। अंतरंग लोगों को पत्र-लेखक पत्र लिखता है। अतः किसी प्रकार दुराव छिपाव नहीं रहता। निःसंकोच रूप में अपने मनोभावों को प्रकट कर देता है। इस शैली में लिखे गए पत्र एक ही पात्र के धारावाहिक पत्र होते हैं। तो कभी अनेक पात्रों द्वारा लिखे गए अनेक पत्रों के माध्यम से कथा विकसित होती है। इससे उपन्यास के प्रत्येक पात्र के चरित्र पर अलग अलग दृष्टियों से प्रकाश पडता है। "पत्रात्मक शैली" के कारण कथा की संकीर्णता कुछ मात्रा में कम हो जाती है।

देवेशजी ने "भ्रमभंग" उपन्यास में पत्रात्मक शैली का उपयोग अत्यन्त भिन्न एवं नवीन रूपों में किया है। "भ्रमभंग" में पत्रों का उपयोग अलग अलग परिस्थितियों में किया है। सम्पूर्ण उपन्यास में एक ही पात्र "चन्दन" विभिन्न पात्रों को पत्र लिखता है। जिसमें उसने सर्वप्रथम अपने पिताजी को पत्र लिखा है। "भ्रमभंग" का पाँचवा सोपान पूर्णतः पत्रशैली में ही लिखा गया है।"७५ पिताजी को लिखे गए पत्रों में व्यक्तिगत पारिवारिक समस्याओं का विवरण है।

२. मेघा को लिखे गए पत्र में प्रेमीहृदय का महानगरीय जीवन में उत्पन्न अकेलेपन का चित्राण है। उस अकेलेपन में मेघा को लेकर सजाई गई कल्पनाएँ हैं। पीडा और अभाव के समय में मेघा के साथ बीते सुख के दो क्षणों की चर्चा है।

३. मित्र नरेश को लिखे पत्र में साहित्यकार और अध्यापक के दायित्व संबंधी विचार है। भाग्यवाद, अंधविश्वास, निष्क्रियता, आदि पर भी व्यंग्य किया है। नयी पीढी के उदय और संघर्ष की सम्भावनाओं पर संतोष व्यक्त हुआ है।

४. मित्र जितेन्द्र को लिखे पत्र में गाँव और बम्बई महानगरीय परिस्थि-तियों का वर्णन है। नरेश की सम्पूर्ण कथा का भी चित्राण है। नरेश के ही सन्दर्भ में विवाह संस्था का खोखलापन और रुढीग्रस्त माता-पिता पर व्यंग्यात्मक प्रहार भी है।

५. "जितेन्द्र के नाम और दो पत्र लिखे गये है।"[७६] जिनमें व्यवस्था की संबंध मे छटपटाता मध्यवर्गीय मन संघर्षपूर्ण जीवन, उच्चवर्ग और मध्यवर्ग का संघर्ष चित्रित हुआ है।

६. "सुमन को लिखे गए पत्र में।"[७७] नायक चन्दन सुमन के साथ बिताये गए कुछ कोमल क्षणों की स्मृति शब्दांकित करता है। स्त्री-पुरुष संबंधों पर कुछ मौलिक तथ्यों की चर्चा भी की है।

इसप्रकार "भ्रमभंग" में लिखे हुए पत्रों में विविध विषयोंपर गम्भीर एवं सुलझे हुए विचार प्रकट हुए है। देवेशजी ने पत्रों के माध्यम से टूटी हुयी कडियों को जोडा है और कथा को एक निश्चित गति और दिशा दी है। पत्रों के माध्यम से चन्दन अपने आक्रांत, संत्रस्त मन को सांत्वना देने की कोशिश भी करता है। शिल्प की दृष्टि से पत्रात्मक शैली को एक नया आकर्षण पैदा हुआ है।

ग] <u>डायरी शैली</u> ✓

डायरी शैली में कथा एवं चरित्रों का विकास पत्रों के माध्यम से न होकर डायरी के माध्यम से होता है। डायरी लेखक अपने जीवन की

कतिपय घटनाओं की प्रतिक्रिया ही अंकित करता है। अतः उसका क्षेत्र भी कुछ हदतक सीमित होता है। डायरी में जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं और अंतःसंघर्ष का चित्रण हो ता है। अतः यह शैली मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के लिए अधिक उपयुक्त होती है। किन्तु इसमें अन्य तत्वों का विकास स्वाभाविक रूप में नहीं हो पाता। डायरी-लेखक के दृष्टिक्षेत्र से परे का चित्रण सही रूप में नहीं हो पाता। कथाविकास भी स्वाभाविक रूप में नहीं होता। फिर भी डायरी शैली का उपयोग पात्र की मनःस्थिति के विश्लेषण के लिए होता है।

"देवेशजी ने डायरी शैली का सुन्दर ढंग से उपयोग किया है। चन्दन मेघा से प्रेम तो करता है, लेकिन सुमन से परिचय प्राप्त करने के बाद नारी सम्पर्क की अनुभूति "डायरी शैली" दवारा व्यक्त करता है।"[७८]

डायरी में अत्यन्त ही छोटे छोटे संवादों के माध्यम से स्त्री-पुरूष। संबन्ध, नारी की विवशता, प्यार, सेक्स आदि महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा की है। चन्दन और सुमन अपने भावी सुखी जीवन की कल्पना करते है। और अचानक एक तूफान से सबकुछ ढह जाता है। इस विषय के चित्रण के लिए निश्चित रूप से "डायरी शैली" उपयुक्त रही है।

"भ्रमभंग" में डायरी शैली की ही भाँति तिथियों शीर्षक का उपयोग किया है। जैसे,

"१० अगस्त, १९७०"[७९]

"आज आठ अगस्त है।"[८०]

"आज सोलह मार्च है।"[८१]

"मार्च, उन्नीस सौ साठ।"[८२]

"आज इतवार हैं।"[८३]

"शुक्रवार।"[८४]

"सितम्बर।"[८५]

जैसे शीर्षकों के साथ कथा विकसित हुई है। अलग अलग संदर्भों में डायरी शैली के प्रयोग से यह उपन्यास शिल्पगत सौन्दर्य की दृष्टि से अधिक आकर्षक बन गया है।

घ] पूर्व - दीप्ति शैली

पूर्व-दीप्ति शैली या "फ्लैश बैक" शैली में जीवन की घटनाओं का वर्णन स्मृति के रूप में होता है। इस शैली में सिर्फ वे ही घटनायें आती हैं, जो वर्तमान की किसी घटना अथवा स्थिति विशेष को सार्थक बनाने में सहायक होती हैं। ये घटनाएँ पात्र के अतीत के जीवन से सम्बन्धित होती हैं। अत: पात्रों के मस्तिष्क में उठनेवाली स्मृति तरंगों की माध्यम से अभिव्यक्त होने के कारण कथा में कोई निश्चित क्रम नहीं होता। जीवन के महत्त्वपूर्ण क्षण में स्मृतितरंगों के माध्यम से अतीत की घटनाओं के धुंधलेपन को लिपिबध्द करके दीप्त किया जाता है।

इससे अतीत के स्मृत्यावलोकन से वर्तमान स्थिति के विवेचन का अवसर मिल जाता है। इस पध्दति का सबसे बडा दोष यह है कि, उपन्यास की कथावस्तु की समग्रता में संतुलन का अभाव खटकने लगता है। फिर भी इस शैली से मनोवैज्ञानिकता बढती है। अत: मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में पूर्व-दीप्ति शैली का विशेष उपयोग होता है। किन्तु सामाजिकता को लेकर लिखे गए उपन्यास में "देवेश ठाकुर" व्दारा इस शैली का प्रयोग सम्भवत: प्रथमबार हुआ है।

"भ्रमभंग" में चन्दन के अतीत के जीवन के विभिन्न दृश्यों की अभिव्यक्ति ही हुई है। इन अतीत की स्मृतियों का वर्तमान की घटनाओं से सीधा संबंध होता है। जैसे, "बम्बई आनेवाली ट्रेन छूट जाने पर बस-यात्रा करनी पडती है। बस में बैठे-बैठे चन्दन लैंसडाउन के भारती फ्लैट से लौटते समय की बस यात्रा की याद में खो जाता है। जो उसके जीवन में एक मोड पैदा करनेवाली घटना थी। यह यात्रा भी उसके भावी-जीवन की निर्णायक यात्रा है। [८६]

सिटी कॉलेज में लेक्चररशिप ज्वाइन करने के पूर्व वह सोचने लगता है, अतीत जब कहानी बन जाता है, अच्छा लगने लगता है, सुख देनेवाला हो जाता है ....।" "एम्. ए. के बाद तीन महिने। बेकारी के पहाडों से दिन .... फिर कंचनसिंह प्राइवेट स्कूल .... किरतपूर का मुस्लिम इण्टर कॉलेज .... हिन्दी लेक्चरर का इण्टरव्यू .... "आपने हिन्दी कहाँतक पढी है?" "मैंने हिन्दी में ही एम्. ए. किया है" .... आपने बी. ए. भी किया है क्या?"[८७] इसप्रकार अनेक प्रसंग है जब चन्दन अतीत में खो जाता है।

ड.] चेतना प्रवाह शैली

इस शैली में छोटी छोटी सुप्त भावनाएँ चित्रित होती हैं। इसमें किया गया चित्रण मानवजीवन के आंतरिक यथार्थ का चित्रण होता है। बाहर को दिखाई देनेवाली हलचल के पीछे स्थित चेतनमन की सूक्ष्म स्थितियाँ एवं संवेदनाएँ इसमें शब्दबध्द की जाती हैं। हृदय की प्रत्येक धडकन का भावधानत्व के उत्थान-पतन का स्पष्ट चित्रण होता है। मन के गूढतम ग वरों में छिपे विकृत विचारों को भी प्रकाश में लाया जाता है।

इसमें पात्रों के तीव्र अंत:संघर्ष का अत्यंन्त ही मार्मिक ढंग से चित्रित किया जाता है। "भ्रमभंग" के चन्दन के मस्तिष्क में संवेदनात्मक रूप में पुनर्जीवित उसकी जिन्दगी की चित्रशृंखला है। इसमें अन्य पात्रों की जिन्दगी से सम्बधित घटनायें भी नायक की चेतना की खिडकी से ही प्राप्त होती है। चन्दन का मन निरन्तर अस्थिर रहता है। वह वर्तमान में विचिलन करते हुए भी, कभी अतीत की ओर मुडता है, तो कभी भविष्य की ओर। वास्तव में इस शैली के लेखकों के लिए भूतकाल होता ही नहीं। केवल विकासमान वर्तमान होता है। अतीत का कोई खण्ड स्वतंत्र अस्तित्व नहीं रखता। उसकी अभिव्यक्ति वर्तमान से तुलना करने के संदर्भ में होती है। इस सन्दर्भ में "भ्रमभंग" का एक अंश दर्शनीय है। —

"पालीवाल से बातचीत ... लिडो पिक्चर हाउस ... "नदिया के पार" ... पिक्चर शुरू हो गई है। हॉल लगभग खाली है। ठीक पीछे एक जोडा बैठा है। लडकी ज्यादा एक्टिव है। पिक्चर हाल। जोडा। सामने पारो गा रही है। मस्तिष्क में अतीत की रीलें चलने लगी है। ... एम्. ए. के दिन। देहरादून। दिग्विजय सिनेमा। बगल की सीट पर मेघा बैठी है। आज उसने साडी पहन रखी है। ... पीछे आहट हुई है। मैं मुडकर देखता हूँ। लडका नौसिखिया है। बहुत डिस्टर्ब कर रहा है। पारो बैलगाडी हाँक रही है। "दिग्विजय" की सीढियाँ उतर रहा हूँ। मेघा पीछे है। नीचे पान की दूकान पर प्रोफेसर शर्मा खडे हैं। हम दोनों एक-दूसरे को देख लेते हैं। एक झेंप ...। पीछे कुछ सरसराहट-सी। एक "खटाक" की आवाज। हुक टूटने जैसी।"[८८]

स्पष्टत: यहाँ चन्दन का मन देहरादून, पीछेवाले जोडे एवं पर्दे पर चल रही फिल्म तीनों जगह उपस्थित है। यहाँ वह अतीत और वर्तमान दोनों से जुडा हुआ है। इस पध्दति में मानसिक क्रियाकलाप के अव्यवस्थित उतार-चढाव को हुबहुब चित्रित किया जाता है। इसमें कोई क्रम होना निश्चित नहीं है। एक विचार-शृंखला में से फूटकर दूसरी विचार-शृंखला चेतना को प्रभावित करती है। एक बात में से दूसरी बात उत्पन्न होती हैं और पुन: मुख्य बात की चर्चा पूर्ववत चलने लगती है।

इसप्रकार चेतना-प्रवाह शैली में लेखक पात्र के मन में प्रवाहित होनेवाली अव्यवस्थित और असम्बध्द भावनाओं को चित्रित करता है। उसके मनमें उठनेवाले, गिरनेवाले विचारों विकारो एवं मनोभावों को लेखा-जोखा बिना किसी टिप्पणीके प्रस्तुत होता चलता है। उदाहरण स्वरूप "शृंगभंग" की ये पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं — "बत्ती गुल है। पालीवाल खर्राटे भर रहा है। मेरी आँखें बंद हैं। मस्तिष्क जगा हुआ है। इण्टरव्यू। छायावाद की विशेषताएँ। दण्डी का काव्य लक्षण। भामह। शब्दार्थौ सहितौ काव्यं। भाषा का विकास। नयी कविता की प्रवृत्तियाँ। कामायनी का रूपक-तत्त्व। यदि मैं तोता होता ...। कैन यू टीच थ्रू इंग्लिश।"[८९]

मानव मन की असंगत क्रमहीन प्रक्रिया को इस शैली के द्वारा उपन्यास का रूप दिया जाता है। इस असम्बध्द उठते - गिरते विचारों की अभिव्यक्ति के लिए लेखक स्वयं को निश्चित प्लॉट में नहीं बाँधता। इनकी भाषा साधारण बोलचाल की भाषा से भिन्न हो जाती है। साधारण वाक्य-विधान से काम नहीं चलता। नये वाक्यों को नये शब्दों का निर्माण करना पडता है। भाषा की शब्दसंपत्ति और व्याकरण का सामान्य स्वरूप बदल जाता है। शब्दों को विकृत किए बिना चेतनाप्रवाह की विलक्षण उलझनों को उपन्यास में प्रतिबिम्बित नहीं किया जा सकता।

छोटे वाक्यों, खण्डवाक्यों, अर्धस्फुट शब्दों का प्रयोग करना होता है। "भ्रमभंग" की ये पंक्तियाँ सुन्दर उदाहरण हैं। — "मध्यवर्गीय नैतिकता। मन में असे भोगो। बाहर नैतिकता दिखालाओ। यह दोहरा चरित्र। मनीऑर्डर भेजते रहो और गाली देते रहो। अपने को कोसते रहो। ... इस सबको कौ बदलेगा? ... खाद ...। सामने से आती हुई एक आवाज। कोने में बैठी लडकी ...। उसे सप्लिमेंट चाहिए। ... थैंक यू सर ...। यह सब कितना अच्छा है।"[९०]

च] दृश्य शैली

"पात्रों के मनोविश्लेषण के लिए दृश्य-विधान शैली अत्यंत उपयुक्त है। इस शैली में छोटे छोटे दृश्यों के माध्यम से वातावरण और पृष्ठभूमि के साथ साथ पात्रों की रूपाकृति एवं कार्यो का सजीव चित्र खींचा जाता है।"[९१]

इस शैलीद्वारा लेखक विराट दृश्यों का चित्रण शब्दों के म माध्यम से संक्षेप में प्रस्तुत करता है। पात्रों के कार्य घटनाएँ तथा जीवन खण्डों के दृश्य इसप्रकार प्रस्तुत किए जाते हैं कि पाठक उन प्रसंगों के साथ तादात्म्य प्राप्त करते हैं। "भ्रमभंग" का अंतिम दृश्य पाठक के मनपर गहरी छाप छोड देता है। साथ ही अपने कथ्य को स्पष्ट करता है। माँ चम्पा के

घर जा रही है। चन्दन रोकता है। माँ रुकती नहीं। वह हमेशा के लिए चले जाने को कहता है। माँ चली जाती है - चन्दन के लिए यह अपमान असह्य है। उसके सामने दुनिया घूम जाती है ...। वह सोचने लगता है -क्या करूँ ? ... कहाँ से शुरु करूँ? तभी उसके ट्रंक पर निगाह जाती है। उठाकर उसे प पटक दिया है। xxxx नल। बाल्टियाँ...। मैंने कमरों में भर - भर बाल्टी उलीच दी है। बीसियों बाल्टियाँ ...। लडखडा रहा हूँ, हाँफ रहा हूँ, और बाल्टियाँ उलीच रहा हूँ ...। मैं अपना घर साफ कर रहा हूँ। घर की बदबू धुल रही है। इसके साथ ही सारे भ्रम भी धुल जायेंगे। अपनेपन का भ्रम। अपने खून का भ्रम। नाते-रिश्तों का भ्रम। सब भ्रम टूटते ही हैं। ... इसलिए टूटना होता है कि वास्तविकता रहे, सचाई जीवन्त हो।"[९२]

पात्र के व्यक्तित्व को चित्रात्मक अभिव्यक्ति देने में भी देवेशजी को सफलता मिली है। प्रो. वोरा का चित्र देखिए - "प्रोफेसर वोरा। उनके बोलने का ढंग। हर शब्द को जैसे कूदकर बोलते हुए। ठिंगना कद। मोटा भारकम शरीर। सरकस का जोकर।"[९३]

वस्तुत: भ्रमभंग के कथानायक की संम्पूर्ण जिन्दगी को पाठक दृश्यों के रूप में देखता है। चन्दन के मन में चल रहा आत्मसंघर्ष विविध दृश्यों के रूप में चित्रित हुआ है।

छ] <u>नाट्य - शैली</u>

नाटकों जैसा प्रभाव डालने के लिए एवं गति की तीव्रता लाने के लिए उपन्यासकार इस शैली का प्रयोग करते हैं। "इसमें उपन्यासकार पात्रों के भावात्मक वार्तालाप के साथ-साथ अपनी उपयुक्त टिप्पणियाँ और पात्रों के अनुभाव चित्र तथा कहीं कहीं उनके अधूरे वाक्य के माध्यम से एक भव्य वातावरण का निर्माण करते हैं। और उनकी आंतरिक भावनाओं की सफल अभिव्यंजना और उद्घाटन करता है।"[९४] इस शैली में पात्रों को अपने कार्यो और कथनों व्दारा कथा को आगे बढाने का अवसर मिलता है।

पात्रों की आकृति, वेशभूषा आदि की सूचना भी नाटक की भाँति दी जाती है। लेकिन उपन्यास पाठ्य होने के कारण क्षेत्र विषय विस्तार आदि की दृष्टि से नाटक से भिन्न होता है। इस शैली में किसी व्याख्याकार की आवश्यकता नहीं होती। इससे कथा कहनेवाला सजीव रूप में चित्रित होता है। अन्य पात्रों को भी नये आयाम मिलते हैं। "भ्रमभंग" में चन्दन के माध्यम से प्रस्तुत कथा इसका सफल उदाहरण है। स्थूल, कार्य-व्यापार के अभाव में लेखक ने चन्दन के मन के चेतना प्रवाह को ही नाटकीयता प्रदान की है। चन्दन की पूरी जिन्दगी नाटक के विभिन्न दृश्यों के रूप में घटित हुयी है। घटनायें प्रत्यक्ष रूप में घटित न होकर कथानायक के मस्तिष्क में घटित होती है। चन्दन ही अपने सम्पूर्ण रहस्य को एकसाथ ही नहीं खोलता। अत: पाठक नाटक की कहानी की तरह भ्रमभंग की कहानी को देखता है। प्रत्येक क्षण नये नये अनुभाव सामने आते हैं। इसीकारण पाठक एकबार चन्दन के मनोजगत में प्रवेश करता है, तो उपन्यास के अंत में ही उससे बाहर निकलता है।

""भ्रमभंग" के अनेक स्थानों पर पात्रों के संवादों के माध्यम से नाटकीय प्रवाह उत्पन्न किया गया है।"[९५] जैसे -

"तुम्हारी उँगलियाँ कितनी सुन्दर है चन्दन।"

"और तुम्हारी? ... तुम्हारी तो समूची देह ही सुन्दर है।"

आदमी घूम - फिरकर देह पर क्यों आता है? "

"शायद इससे अपने को प्रकट करने में सुविधा होती हो ..."

"प्यार देह से होता है क्या?"

"जरूरी नहीं, ... पर शुरू जरूर देह से होता है।"

"फिर ...?"

"फिर सब डिपेण्ड करता है ... देह से मन तक ... रग-रग में बैठता-फैलता हुआ। या देह से देह तक ही। और फिर उदासीनता ... शिथिलता ...।"[९६]

ज] संवाद शैली

नाटय शैली की सार्थकता छोटे छोटे एवं सहज, स्वाभाविक संवादों के माध्यम से ही सम्भव है। "भ्रमभंग" में इन संवादों का सफल एवं सार्थक उपयोग हुआ है। संवाद मुख्यत: वैयक्तिक जीवन से सम्बध्दित समसामयिक सन्दर्भों से संपृक्त पारिवारिक समस्याओं, आपसी कलह आदि विषयों से सम्बध्दित है। "भ्रमभंग" में सामयिक परिस्थितियों के विश्लेषण में सम्पूर्ण व्यवस्था के संबंध के प्रति आक्रोश प्रकट करते हैं। ये संवाद विविध रूपों में दृष्टिगत होते हैं। इनमें कहीं एकालाप का प्रयोग हुआ है। तो कहीं एकपक्षीय टेलिफोनिक संवादों के एकपक्षीय होते हुए भी लेखक स्थिति और अर्थ को पूरी तरह व्यक्त करने में सफल रहा है।

"भ्रमभंग" में एक स्थानपर ऐसे संवादों का प्रयोग हुआ है। चन्दन रमेश पालीवाल से बात करता है, - "हलो ... पालीवाल ...। ... अरे रमेश। हाँ, मैं हूँ चन्दन ... आज ही ...। ... अभी सबेरे ही पहुँचा हूँ ...। हाँ, चाचाजी के यहाँ ही हूँ ...। देहरादून में सब ठीक है ...। उसमें क्या हुआ? एक ही दिन तो ठहरना है। ... अच्छा ... अच्छा ... रात को तेरे पास आ जाऊँगा।"[९७]

संवादों में पात्र के एवं विषय के अनुरूप भाषा होने के कारण उनमें अद्भुत संप्रेषण शक्ति है। संवादों के माध्यम से पात्रों के स्वभाव का परिचय भी मिलता है।

झ] समय - विपर्यय शैली

चेतना-प्रवाह शैली और पूर्व-दीप्ति शैली के उपयोग ने उपन्यासों में कथावस्तु को क्रमोच्छेदित कर दिया। समय-विपर्यय शैली इसी का परिणाम है। इस शैली के उपन्यास का आरम्भ कभी अन्तिम दृश्य या घटनासे होता है तो कभी मध्य से। पात्रों के चरित्रविकास की गति को भी उलट-पुलट कर उपस्थित किया जाता है। "भ्रमभंग" की घटनायें भी चेतना-प्रवाह शैली में प्रस्तुत होने के कारण किसी निश्चित क्रम में प्रस्तुत नहीं हुयी है। इसमें अनेक

घटनायें स्मृत्यावलोलोकित भी हुयी है। जिससे क्रमबध्दता का अभाव दिखाई देता है।

त्र] विश्लेषणात्मक शैली

विश्लेषणात्मक शैली में पात्रों के चेतन या अचेतन विचारों की प्रक्रिया को अभिव्यक्ति ही दी जाती है। इस शैली का प्रयोग "भ्रमभंग" में अत्यन्त व्यापक पैमानेपर हुआ है। "भ्रमभंग" का चन्दन मध्यवर्गीय संस्कारों में जकडा है। यह उसके मन की हीन भावना एवं कुण्ठा ही है, जिसके कारण उसे अपनी जिन्दगी गोबर-सी प्रतीत होती है, जिसे न तो वह जी सकता है, न उससे मुक्त ही हो सकता है। उसे अपनी औकात खोली के सामने रखे पत्थर जैसी महसूस होती है। "जिस पर कोई बरतन मांज जाता है। कोई कपडे धो जाता है और कभी-कभी कोई शरारती बालक आकर पेशाब कर जाता है।"[९८]

"चन्दन" मध्यवर्गीय संस्कारोंवाली मानसिकता से अंततक जूझता हुआ दिखाई देता है। परिवेश में व्याप्त व्यवस्था की सडांध में पैसों पर खडे रिश्ते-नाते की घुटन से मुक्त होने के लिए वह दोहरी लडाई लडता है। फिर भी उसके सारे भ्रम भंग हो जाते हैं। "चन्दन अपने मन के आक्रोश को प्रकट करता हुआ कहता है - "रोओ चन्दन। खूब रोओ। लेकिन यह आक्रोश रोने भी नहीं देता। जी करता है, इस वार्ड के बीच में होकर खडा होकर चिल्लाऊँ। कहूँ ... मेरा कोई नहीं हैं। न माँ, न बाप। न भाई, न बहिन। मैं अकेला हूँ। मेरा कोई नहीं है। एक लावारिस इनसान ...।"[९९]

मध्यवर्ग को व्यक्ति न मानकर एक मेन्टॅलिटी मानते हैं। जिसमें सडांध भरी प्रवृत्ति है। चन्दन की मनश्चेतना का यहाँ आत्मविश्लेषण हुआ है। चन्दन के मन की यही छटपटाहट उसे उपन्यास के अन्त में हीन ग्रंथि से छुटकारा भी दिलाती है। कथानायक के मनश्चेतना के प्रवाह को चित्रित करता हुआ सम्पूर्ण उपन्यास चन्दन का आत्मविश्लेषण ही प्रतीत होता है।

ट] <u>सांकेतिक शैली</u>

इस शैली में उपन्यासकार दृश्य, घटना अथवा परिस्थिति का विशाद चित्र अंकित न करके कतिपय संकेतों के माध्यम से सुन्दर दृश्य प्रस्तुत करता है। "भ्रमभंग" उपन्यास में अनेक स्थलोंपर घटनाओं या परिस्थितियों को सांकेतिक शैली में प्रस्तुत किया है। जैसे. "डेढ सौ की क्लास। कुत्ते-बिल्ली की आवाजें। यू शट अप। ... दिस इज नॉट योर डेडीज ड्राइंगरूम। बडी बडी आँखें। उनमें उभरते हुए आँसू ... शोभा कृपलानी ... मिस कृपलानी ...कम्पलसरी हिन्दी ... आ ऐम सॉरी सर ...। आई, कार्ड। देखो, मैं यहाँ एक हजार मील से ...।"[१००]

चन्दन के मन में नर्स चिमन्ना के प्रति उठ रहे मनोभावों के चित्रांकन में सांकेतिक शैली का सुन्दर निर्वाह हुआ है। "क.. केरल। कुमायूँ। केरल का नारियल कुंज। कुमायूँ की गंगा। शीतल श्यामल उँगलियाँ ...। कुमायूँ की गंगा केरल के नारियल कुंजों के बीच बह रही है ...।"[१०१]

"भ्रमभंग" में भी प्रो. नाडकर्णी और ज्योति अहलूवालिया के वैवाहिक सम्बन्ध का सांकेतिक वर्णन लेखक ने किया है। "कितना अच्छा होता है ऐडजस्ट कर लेना। प्रोफेसर नाडकर्णी। मिस ज्योति। अब दोनों सीरियस हो गये हैं। मिस ज्योति ने चूइंगम छोड दी है। प्रोफेसर नाडकर्णी थ्री फाइव पीने लगे हैं। मैन्लि लुक। मिस ज्योति इलायची के दाने चबाती है। धीरे-धीरे ...। वह औरत होती जा रही है। लडकीपन छूट आया है। प्रो. एकनाथ नाडकर्णी। मिस ज्योति अहलूवालिया। मिसेज ज्योति नाडकर्णी।"[१०२]

इस शैली का सार्थक उपयोग उपन्यास के सौन्दर्य को बढा देता है। पाठक के मन में एक एक शब्द के संकेत से एक-एक दृश्य को उभारने में अत्यंत सफलता प्राप्त हुयी है।

ठ] <u>प्रतीकात्मक शैली</u>

जिन भावों को व्यक्त करते समय कठिनाई महसूस होती थी, उन्हें सहज एवं प्रभावशाली ढंग से प्रकट करने के लिए प्रतीकात्मक शैली का विकास हुआ

हुआ। जिससे औपन्यासिक कलात्मकता बढती है। देवेशजी ने "भ्रमभंग" में प्रतीकों के माध्यम से पात्रों की मनःस्थितियों को चित्रित किया है, साथ ही महत्वपूर्ण घटनाओं को भी प्रगट किया है। "बाहर आँधी चल रही है। धूल से भरा हुआ आसमान। कहीं कुछ नहीं सूझता ...।"[103]

इसप्रकार "भ्रमभंग" का चन्दन इण्टरव्यू देकर जब बाहर निकलता है तब उसकी [illegible] मानसिकता एवं धुंधले भविष्य को प्रतीकात्मक रूप में देवेशजी ने अभिव्यक्त किया है। "चन्दन" और "सुमन" के लिए "जाले" और "ऑइल पेंटिंग्ज" के प्रतीकों का सुन्दर प्रयोग हुआ है। "तुम्हारा ड्राइंग रूम ...। रेशमी परदे ...। आइल पेंटिंग्ज। ... मैंने कबूतर का घोंसला कल ही साफ किया है। ... एक जाला कोने में फिर भी बचा रह गया है। ... सच सुमन ...। जाले और ऑइल पेंटिंग्ज ...। कहाँ कैसे लोग मिल जाते हैं।"[104] चन्दन के घर की कल्पना "घोंसले" के प्रतीक व्दारा अभिव्यक्त हुई है। कुंदन अभाव का प्रतीक बन गया है। चम्पा और रघुमल के सन्दर्भ में "चॉकस्टिक" और "ब्लैकबोर्ड" के सुन्दर प्रतीकों का प्रयोग हुआ है। "चम्पा और रघुमल। ... चॉकस्टिक और ब्लैकबोर्ड ... ब्लैकबोर्ड पर यह चॉकस्टिक घिसती जायेगी। धूल होता चूरा फर्श पर बिखरता जायेगा। अगले दिन मेहतर आयेगा और फर्श को झाडू से साफ कर जायेगा। रघुमल और चम्पा ...। इस खडिया मिट्टी की अन्तिम परिणति यही है।"[105]

ड] <u>एकालाप शैली</u>

एकालाप शैली में पात्र स्वयं को ही सम्बोधित करते हुए विभिन्न स्थितियों का विश्लेषण करता है। और एक निश्चित निश्चय पर पहुँचता है।

"भ्रमभंग" का चन्दन कई बार स्वयं से सम्बोधित होता हुआ चि चित्रित हुआ है। चन्दन जब भी अपने को अकेला और हीन अनुभव करता है, तो प्रति "चन्दन" समझाता है - "बत्ति जला लो। महसूस करो कि तुम हो। तुम इतना सोचते ही क्यों हो चन्दन? सोचने से पीडा होती है। कोई भी ऐसा नहीं जो सुख देता हो। तुम स्वयं दुखों को न्योत रहे हो। ठीक नहीं

यह । उठो । अभी नहाये तक नहीं । आज ... चलो ...। कपडे बदलो थोडा घूम आओ । मन बदल जायेगा ।"[१०६]

निराश चन्दन का अन्तर्मन हमेशा चन्दन को सांत्वना दिलाता है। "यह कभी-कभी क्या हो जाता है चन्दन तुम्हें? तुम निराश क्यों हो जाते हो? तुम क्यों अपने अभावों को इतना बढा-चढाकर सोचने लगते हो? तुम सोचते हो, दुनिया-भर का बोझ तुम्हारे कन्धों पर आ पडा हैं। सचमुच ऐसा नहीं हैं, चन्दन । उत्सर्ग का सुख, उसके दु:ख से बहुत बडा होता है ।"[१०७]

उपर्युक्त उद्दरणों से यह स्पष्ट है, कि "भ्रमभंग" में एकालाप का सफल प्रयोग हुआ है ।

ढ] व्यंग्यात्मक शैली

वस्तुत: जीवन के विविध पहलुओं की यथार्थ अभिव्यक्ति के लिए व्यंग्य एक प्रभावशाली माध्यम है । "भ्रमभंग" उपन्यास में विसंगतिपूर्ण समाज की वैविध्यपूर्ण जिन्दगी को सार्थक अभिव्यक्ति दी है । देवेशजी शोषितों एवं दलितों के हितरक्षा के लिए प्रतिबध्द रचनाकार है । प्रचलित व्यवस्था से वे असंतुष्ट है । क्योंकि सामान्य जनता महँगाई और भ्रष्ट व्यवस्था के आतंक से पीडित है । अत: प्रचलित व्यवस्था के विरोध में आक्रोश प्रकट होना स्वाभाविक है । देवेशजी का यह आक्रोश निम्नांकित पंक्तियों में स्पष्ट झलकता है । "एक और वर्ग है, हम लोगों से अलग । प्रकाश जैसे लोगों का है - जो नर्सिंग होम में जनमते हैं, जिनके लिए जन्म से पहले आयाएँ रख दी जाती हैं, जो शिक्षा पूरी करने से पहले अपनी कंपनियों के डायरेक्टर और पार्टनर बन जाते हैं, जिनके लिए पत्नी का चयन इस तरह होता है जैसे कोई आकर्षक और प्रिजेन्टेबल खिलौना खरीदने चले हों, और जो जिन्दगी का एक-एक दिन आराम के साथ जीते हैं और अन्त में भी चन्दन की लकडियों पर सुलाये जाते हैं ।"[१०८]

"भ्रमभंग" उपन्यास में जिस भ्रष्ट व्यवस्था के प्रति आक्रोश प्रकट किया है उस व्यवस्था में संबंधों की गाँठ मात्र पैसे के आधारपर जुडती है ।

कोई भी चन्दन बेटा और भाई नहीं बल्कि एक मशीन बन गया है जो रुपये पैदा किया करें। सम्बन्धों के इस कदर लिजलिजे हो जाने का ही परिणाम है कि, ""बहनजी"कहनेवाले बहन के मर्द बन जाते हैं, पता नहीं चलता ...|"[१०९] "माँ और बहिन के रिश्ते। कैसे रिश्ते? कैसा खून? कैसा प्यार ...? ये तो गैंग्रीन हैं। जिन्दा रहना है तो अपने शरीर से इन्हें काटकर फेंक देना होगा। ... नहीं तो तुम नहीं रहोगे।"[११०]

ऐसी भ्रष्ट व्यवस्था में योग्यता और डिग्री का कोई महत्व नहीं है। "किसी का चमचा बन जाना या सब स्थितियों में दाँत निपोरने का अभ्यास करना ही आज सफलता की योग्यता हो गया है।"[१११]

महानगरीय जीवन की विभीषिका का दृश्य लेखक के शब्दों में, "बच्चे तुम्हें पहचानते भर हैं। क्योंकि रोज रात को इस घर में आते हो तुम। उनकी माँ से बातें करते हो। तुम्हारे बच्चे समझ जाते हैं, कि तुम ही उनके पिता हो।"[११२]

इसप्रकार देवेशजी ने अपनी विशिष्ट व्यंग्यात्मक शैली में पूरी व्यवस्था के प्रति अपना आक्रोश प्रकट किया है। मध्यवर्गीय जीवन की विडम्बना, महानगरीय जीवन की भावनाशून्यता, व्यवस्था में भ्रष्टाचार आदि को व्यंग्यात्मक शैली द्वारा प्रकट करने की सार्थक क्षमता देवेशजी को निश्चित रूप से प्राप्त हुयी है।

ग] विसादृश्य शैली

प्रस्तुत शैली में स्थितियों को प्रभावशाली रूप देने के लिए विरोधी प्रकृति की वस्तुओं को आमने-सामने रखकर चित्रण किया जाता है। इस शैली का सुन्दर प्रयोग चन्दन की बदलती हुयी मन:स्थितियों के अनुकूल रंग बदलते गुलमोहर के गुच्छों और माँ से हुयी उसकी बातचीत के संदर्भ में हुआ है। "... बैलकॅनि पर झुकी गुलमोहर की डाल है। मन आज हलका है। कितने दिनों बाद पक्षियों को चहचहाते सुन रहा हूँ ...| आज की सुबह कितनी अच्छी है। बच्चे स्कूल की तैयारी में लगे हैं ... सुन्दर लगते हैं ... तभी माँ

मेरे पास आकर खडी हो जाती है | ... शायद रास्ता देख रही है कि मैं कुछ बोलूँ ...|"[११३]

इसतरह इन चित्रादृश्यों की योजना करके लेखक ने सफलता के साथ अनेक सन्दर्भो में प्रभावक्षमता को बढाया है |

त] सिनेरिया शिल्प

हिन्दी उपन्यास के शिल्प को सिनेमा की विविध तकनिकों ने भी प्रभावित किया है | सिनेमा की "क्लोज-अप", "स्लो-अप" और "कट-बॅक" पध्दतियाँ इस शैली में प्रयुक्त हुयी है | सिनेमा की फोटोग्राफी - तकनीकी को देवेशजी ने अपनाया है |

"भ्रमभंग" में ऐसे प्रयोग स्थान स्थान पर बिखरे पडे हैं | "इसी कस्बे में मेरा बचपन बीता है | पतंग| गिल्ली-डंडा | बीडी के टुकडे | हाईस्कूल | कुश्ती | अखाडा | सडको पर चलते हुए लडना | बात-बात पर मुक्केबाजी | शमीम | जगदीश | दोस्ती | अपनापन | सुदेश | महेन्द्र | रघुवीर | लल्लू सिंह | यहाँ कितने लोग अपने हैं |"[११४]

"क्लोज-अप" पध्दति के प्रयोग सौन्दर्य-चित्राण में किया है | सुमन शाह के सौन्दर्य के बारे में चन्दन सोचता है ... "प्रोफेसर शाह एक बार और मुस्कराती हैं | हलकी लिपस्टिक का गुलाबी रंग | पतले होठ | आँखे काले और भूरे के बीच के रंगवाली |"[११५]

"कट-बॅक" पध्दति "फ्लैश-बॅक" का ही दूसरा रूप है |

थ] चिह्न शैली

देवेशजी ने मौन को भी विशिष्ट चिह्नों के माध्यम से इतने प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त किया है कि, पात्रों के अन्तर्मन की भावनाएँ सहज ही प्रकट होती है | इसका प्रयोग "भ्रमभंग" में विशेष रूप से हुआ हैं | कहीं कहीं पर तो लेखक ने "प्रश्नवाचक चिह्न का प्रयोग करके पात्रों को प्रश्न पूछते चित्रित किया है | जैसे --

"सुमन, तुम पागल हो गयी हो ...?"

" चन्दन ...|"

" ....|"

"सोचती हूँ, काश मेरी समय पर शादी हो गयी होती ... और तुम जैसा मेरा बेटा होता |"

" ......|"

" ......|"

" ......|"

" ......|"

" ......|"

" ......|"

" कल बम्बई चले [redacted] जाओगे न?"

" हाँ ...|"[११६]

" ... तीन बेडरूम ...?"

" नहीं तो क्या ...? एक तुम्हारा, एक मेरा, एक हम दोनों का |"

" .....?"

" क्या सोचने लग गये?"

" कुछ नहीं ...|"

" कुछ तो ...?"

" ....|"[११७]

उपर्युक्त उध्दरणों से यह स्पष्ट होता है कि "चिह्न शैली" औपन्यासिक कलात्मकता को बढाने में सहायक होती है |

द] <u>विवरणात्मक शैली</u>

इस शैली में किसी भी दृश्य या पात्र का सरल और सीधे-सादे ढंग से वर्णन किया जाता है तथा यह शैली परंपरागत मानी गयी है | पात्रों की परिस्थितियों एवं उनके परिवेश के चित्रणव्दारा सम्पूर्णता का आभास दिलाने में यह शैली उपयुक्त होती है | बाह्य दृश्यों और घटनाओं को इस शैली में प्रस्तुत करके यथार्थ का सही आकलन होता है | रचनाधर्मी देवेशजी ने इस शैली का प्रयोग अपेक्षाकत कम किया है | "भ्रमभंग" उपन्यास में सर्वाधिक प्रचलित इस विवरण शैली का सफल प्रयोग किया गया है | इसके

माध्यम से पात्रों के सूक्ष्म क्रियाकलापों, चेष्टाओं तथा मन:स्थितियों के अनुरूप परिवेश-चित्रण में देवेशजी सफल हुए हैं। इस शैली की सार्थकता इसके सप्रयोजन एवं प्रासंगिक होने में निहित है। "भ्रमभंग" में नायक चन्दन अलग अलग परिस्थितियों में विभिन्न लोगों को पत्र लिखता हैं। इनमें कहीं पारिवारिक समस्याओं, महानगरीय जीवन की विसंगतियों तथा भ्रष्ट व्यवस्था का चित्रण हुआ है। कुछ पत्रों में प्रेमी हृदय की विवशता, अकेलापन तथा व्यथा वर्णित हुई है। अधिकांश पत्र अतीत की कथा जोडते हैं। तात्पर्य टूटी हुई कडियों को जोडने के लिए चन्दन के विविध पत्र "भ्रमभंग" की विवरणात्मक शैली को नया आकर्षण प्रदान करते हैं।

२०] निष्कर्ष

देवेशजी ने "भ्रमभंग" उपन्यास में अपनी रचनाधर्मिता की नवीनता को प्रकट किया है। उपन्यास के विषय के अनुरूप विविध शैलियों का भी उपयोग किया है। देवेशजी की शैली की यह विशेषता रही है कि, उन्होंने किसी निश्चित एवं समान शिल्प-विधि का प्रयोग नहीं किया। "भ्रमभंग" "आत्मकथात्मक पध्दति" में लिखा गया है, फिर भी उसमें चेतना-प्रवाह शैली के व्दारा चन्दन की अंतश्चेतना का प्रभावपूर्ण चित्रण किया है।

मध्यवर्गीय विवशताओं में फँसे व्यक्ति के मन में चल रहे व्दन्व्दों और उलझनों को व्यक्त करने का सशक्त माध्यम भी यही है। इसके अतिरिक्त देवेशजी ने फिल्मों की "फ्लैश-बॅक" पध्दति एवं "फोटोग्राफिक तकनीक" भी अपनायी है। पत्रात्मक और डायरी जैसी शैलियों के माध्यम से अन्तर्मन के गूढ एवं रहस्यमय तथ्यों की अभिव्यक्ति अत्यन्त ही प्रभावशाली ढंग से हुयी है। विविध दृश्यों की योजना करके लेखक ने जो नाटकीय प्रभाव उपन्यास में उत्पन्न किये हैं वे दृश्य तथा नाट्य-शैली के प्रयोग के कारण ही बन पडे हैं।

विसादृश्य, सांकेतिक, प्रतीकात्मक, व्यंग्यात्मक एवं विश्लेषणात्मक शैलियों के प्रयोग के कारण अभिव्यक्ति कौशल में संप्रेषणीयता एवं कलात्मकता आ गयी है।

समग्रत: "भ्रमभंग" का शिल्प कथ्य को सार्थक ढंग से संप्रेषित करने में सफल हो चुका है। इसतरह "भ्रमभंग" की शिल्पशैली विविध शिल्प-शैलियों के संयोग से एक अनुपम शिल्प-शैली निर्मित हुयी है। इसे कोई "देवेश शैली" कहना चाहे तो कह सकता है। उपन्यास के प्रस्तुति-शिल्प के संदर्भ में यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि, देवेशजी ने शिल्प-विधान की नयी सम्भावनाओं का अविष्कार किया है। जिसतरह विविध-शैलियों का उपयोग करके "भ्रमभंग" के प्रस्तुतिकरण शिल्प को देवेशजी ने एक नया आयाम दिया है, यह उनकी प्रयोगधर्मिता का एक अच्छा प्रमाण है। "भ्रमभंग" के सम्पूर्ण शिल्प में कहीं कोई असंगति नहीं है।

चन्दन के सम्पूर्ण जीवन-प्रवाह की सफल अभिव्यक्ति के लिए प्रस्तुत शिल्प समर्थ है। "भ्रमभंग" में उपन्यास के तत्वों के प्रचलित ढाँचे को तोडने का एवं प्रस्तुति - शिल्प के क्षेत्र में भी नवनवीन प्रयोग करने की प्रयोगशील वृत्ति देवेशजी की उपन्यासकला की सबसे बडी विशेषता है।
शिल्प प्रयोगों की इतनी विविधता शायद ही अन्य किसी उपन्यासकार में इतनी शक्तिमत्ता के साथ प्रकट हुई है। अत: अज्ञेय के पश्चात् देवेशजी को सबसे सक्षम प्रयोगधर्मी उपन्यासकार कहा जा सकता है।

x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x

-: संदर्भ :-

१.	प्रा. सतीश पाण्डेय	: "कथा-शिल्पि देवेश ठाकुर"	: पृ. ५३
२.	जैनेन्द्रकुमार	: "साहित्य का श्रेय और प्रेम"	: पृ. ३६८
३.	डॉ. प्रतापनारायण टंडन	: "हिन्दी उपन्यास में कथा-शिल्प का विकास"	: पृ. ३४६
४.	प्रा. सतीश पाण्डेय	: "कथा-शिल्पि देवेश ठाकुर"	: पृ. ५७
५.	डॉ. सुरेश सिन्हा	: "हिन्दी उपन्यास"	: पृ. ३९४
६.	प्रा. सतीश पाण्डेय	: "कथाशिल्पि देवेश ठाकुर"	: पृ. ८४
७.	देवेश ठाकुर	: "भ्रमभंग"	: पृ. २५, ९२, १०९, १२४, १४८, १७२, १७२
८.	वही	: वही	: पृ. १६२
९.	वही	: वही	: पृ. ९, ५५, ९०, १२०, १२६, १४७, १४२, १७०, १३८, ३५
१०.	वही	: वही	: पृ. ३७, ६३, ९५, १३८, १५९, १५४, १५३
११.	वही	: वही	: पृ. ४४
१२.	वही	: वही	: पृ. १७१
१३.	वही	: वही	पृ. २९, ५५
१४.	वही	: वही	: पृ. २९, ५५
१५.	वही	: वही	: पृ. २४, ४३, १२२, १५५
१६.	वही	: वही	: पृ. ९, २८, ६८, ११९, १३१, १६९
१७.	वही	: वही	: पृ. ९, १२, १७, २१, ५४, ६२, ७३, २४, २५
१८.	वही	: वही	: पृ. ५३
१९,	वही	: वही	: पृ. ६६
२०.	वही	: वही	: पृ. १०२

२१.	देवेश ठाकुर	: "भ्रमभंग"	: पृ. ११. १२. २६. ११९
२२.	वही	: वही	: पृ. ११. २०. ३०
२३.	वही	: वही	: पृ. १५
२४.	वही	: वही	: पृ. ६९
२५.	वही	: वही	: पृ. ६०. १५०, १५२, १८५
२६.	वही	: वही	: पृ. ३८, १७४, १०८, १ १४७, १७०
२७.	वहि	: वही	: पृ. ४६, ६१, ७१, ८१, ९०, १११, ९३
२८.	वही	: वही	: पृ. ८२, १३८, १८५, १६२
२९.	वही	: वही	: पृ. २१
३०.	वही	: वही	: पृ. १४१
३१.	वही	: वही	: पृ. ४६
३२.	वही	: वही	: पृ. ९२
३३.	वही	: वही	: पृ.. ८६
३४.	वही	: वही	: पृ. १०३
३५.	वही	: वही	: पृ. १७४
३६.	वही	: वही	: पृ. २४. ६३. ५७, ११४, १९०, १८६
३७.	वही	: वही	: पृ. ८७
३८.	वही	: वही	: पृ. ५६
३९.	वही	: वही	: पृ. ८१
४०.	वही	: वही	: पृ. १२३
४१.	प्रा. सतीश पाण्डेय	: "कथाशिल्पि देवेश ठाकुर"	: पृ. ९९
४२.	देवेश ठाकुर	: "भ्रमभंग"	: पृ. ८४
४३.	वही	: वही	: पृ. १०२
४४.	वही	: वही	: पृ. ९४
४५.	वही	: वही	: पृ. ११९
४६.	वही	: वही	: पृ. ६०

४७. देवेश ठाकुर : "भ्रमभंग" : पृ. ९२

४८. वही : वही : पृ. ९८

४९. वही : वही : पृ. १२४

५०. वही : वही : पृ. २०

५१. वही : वही : पृ. १०८

५२. वही : वही : पृ. १०९

५३. वही : वही : पृ. २१

५४. वही : वही : पृ. २२

५५. वही : वही : १३१

५६. वही : वही : पृ. २२

५७. वही : वही : पृ. ७८

५८. वही : वही : पृ. २१

५९. वही : वही : पृ. १०

६०. वही : वही : पृ. ८५-८६

६१. वही : वही : पृ. ८१

६२. वही : वही : पृ. ३८

६३. वही : वही : पृ. ७२

६४. वही : वही : पृ. ५८. ७६

६५. डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र : "अज्ञेय का उपन्यास साहित्य : पृ. ३४

६६. डॉ. श्यामसुन्दरदास : "साहित्यालोचन" : पृ. ९५

६७. डॉ. गुलाबराय :"सिध्दांत और अध्ययन" : पृ. १८०

६८. डॉ. सुशाकुमार जैन : "हिन्दी और मराठी के रेखा-चित्रोंका तुलनात्मक अध्ययन : पृ. २११

६९. डॉ. तहसिलदार दुबे : "स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास साहित्य में शिल्पविधी का विकास" : पृ. १६

७०. डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र : "अज्ञेय का उपन्यास साहित्य" : पृ. २०७

७१. जगन्नाथ प्रसाद मिश्र शर्मा : "कहानी का रचना विधान" : पृ. १५३

७२. [illegible]

७२. सम्पा. नन्दलाल यादव: "देवेश ठाकुर : व्यक्ति, समीक्षक और कथाकार" : पृ. २५१
[डॉ. गंगा प्रसाद विमल - "उपन्यासों में व्यवस्था - विरोध "]

७३. प्रा. सतीश पाण्डेय	: "कथाशिल्पि देवेश ठाकुर "	: पृ. ११५
७४. डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र	: "अज्ञेय का उपन्यास साहित्य"	: पृ. २३७
७५. देवेश ठाकुर	: "भ्रमभंग"	: पृ. ५७-६७
७६. वही	: वही	: पृ. १२३, १४७
७७. वही	: वही	: पृ. १४९
७८. वही	: वही	: पृ. १०६-११८
७९. वही	: वही	: पृ. २०२
८०. वही	: वही	: पृ. ५१
८१. वही	: वही	: पृ. १६३
८२. वही	: वही	: पृ. १०१
८३. वही	: वही	: पृ. १७२
८४. वही	: वही	: १७३
८५. वही	: वही	: पृ. १८८
८६. वही	: वही	: पृ. १८, १९
८७. वही	: वही	: पृ. ४९
८८. वही	: वही	: पृ. २३-२४
८९, वही	: वही	: पृ. ३२
९०. वही	: वही	: पृ. ८७
९१. प्रा. सतीश पाण्डेय	: "कथाशिल्पि देवेश ठाकुर"	: पृ. १२७
९२. देवेश ठाकुर	: "भ्रमभंग"	: पृ. २०३
९३. वही	: वही	: पृ. ९९
९४. डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र	: "अज्ञेय का उपन्यास साहित्य"	: पृ. २३६
९५. देवेश ठाकुर	: "भ्रमभंग" [चन्दन और सुमन के संवाद]	: पृ. १०६-११८ तक
९६. वही	: वही	: १०९
९७. वही	: वही	: पृ. २३

९८. देवेश ठाकुर	: "भ्रमभंग"	: पृ. २१
९९. वही	: वही	: पृ. ७७
१००. वही	: वही	: पृ. ५५
१०१. वही	: वही	: पृ. ७४
१०२. वही	: वही	: पृ. ८९-९०
१०३. वही	: वही	: पृ. ४९
१०४. वही	: वही	: पृ. १०५
१०५. वही	: वही	: पृ. १८८
१०६. वही	: वही	: पृ. १४४
१०७ वही	: वही	: पृ. ९०
१०८. वही	: वही	: पृ. १४८
१०९. वही	: वही	: पृ. १८७
११०. वही	: वही	: पृ. १८७
१११. वही	: वही	: पृ. ५४
११२. वही	: वही	: पृ. २७
११३. वही	: वही	: पृ. १९२
११४. वही	: वही	: पृ. ४८-४९
११५. वही	: वही	: पृ. ९९
११६. वही	: वही	: पृ. ११८
११७. वही	: वही	: पृ. ११२